इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम

आयतुल्लाह सैय्यिद मुहम्मद हुसैन तबातबाई (ताबा सराह)
मुतरजिम : जनाब असर नक़वी जायसी

विलादत : 3 शाबान 4 हिजरी
शहादत : 10 मोहर्रम 61 हिजरी

अली (अ0) और फातिमा (स0) के दूसरे साहबज़ादे सैय्यिदुश्शोहदा हज़रत इमाम हुसैन (अ0) 4 हिजरी में पैदा हुए और हज़रत इमाम हसने मुजतबा (अ0) की शहादत के बाद हुक्मे इलाही और अपने भाई की वसिय्यत के मुताबिक़ इमाम मुक़र्रर हुए। (इरशाद पेज–176) हज़रत इमाम हुसैन (अ0) दस साल की मुद्दत तक इमाम रहे और मुद्दते इमामत के आख़री छः माह आपने खलीफ–ए–वक़्त मुआविया के जौरो सितम की वजह से इन्तिहाई ईज़ा रसानी के आलम में गुज़ारे। इन बातों की सबसे पहली वजह तो यह थी कि मज़हब के उसूल व ज़वाबित की क़द्रें बिलकुल पामाल हो गयीं थीं। और हुकूमते बनी उमैय्या को पूरा इक़्तेदार और ताक़त हासिल हो गयी थी। दूसरे यह कि मुआविया और उसके मददगारों ने अहलेबैते अतहार और उनके शीओं को पसे पुश्त डाल दिया था, और इस तरह वह हज़रत अली (अ0) और उनके अफ़रादे ख़ानदान का नाम व निशान मिटा देना चाहते थे। इसकी सबसे बड़ी वजह यह थी कि मुआविया अपने उस बेटे यज़ीद की ख़िलाफत के लिए राह हमवार करना चाहता था जिसकी बदकिरदारी की वजह से मुसलमानों की एक बड़ी तादाद उसके ख़िलाफ थी। बहरहाल, इस मज़ाहमत को रोकने के लिए मुआविया ने सख़्त तशद्दुद आमेज़ रवैय्या इख़्तियार किया और हज़रत इमाम हुसैन (अ0) को उन दिनों मुआविया और उसके मददगारों की तरफ से सख़्त तकलीफें झेलने और दिमाग़ी उलझन नीज़ रूहानी तकलीफ से ज़बरदस्ती दोचार रहने पर मजबूर किया गया। यहाँ तक कि 60 हिजरी में मुआविया का इन्तेक़ाल हो गया, और उसके बेटे यज़ीद ने उसकी जगह संभाल ली।

(इरशाद पेज–182)

हुसूले बैअत अरब का एक पुराना दस्तूर था जो बादशाहत और हुकूमत जैसे अहम उमूर में तलब की जाती थी। जिसमें रिआया और ख़ास तौर से अवाम के अन्दर मौजूद मशहूर शख़्सियतें इताअत के तौर पर अपना हाथ हाकिमे वक़्त या शहज़ादे के हाथ में देती थीं। वह लोग यह मुआहदा करते थे कि वह हुकूमत के वफादार रहेंगे। और इस तरह वह हुकूमत के काम में अपनी हिमायत ज़ाहिर करते थे। इताअत के मुआहदे के बाद उसकी ख़िलाफवर्ज़ी को हुक्मे उदूली तसव्वुर किया जाता था और सरकारी तौर पर किसी मुआहदे पर दस्ख़त करके उसे तोड़ देने की तरह उसे एक जुर्म तसव्वुर किया जाता था। पैग़म्बरे इस्लाम की तरफ से पेश की गयी मिसाल के मुताबिक़ लोग इसी मुआहद–ए–इताअत को बावज़न और बावक़अत समझते थे जो किसी दबाव के तहत नहीं बल्कि आज़ादाना तौर पर किया जाता था।

मुआविया ने उस दौर की मशहूर शख़्सियतों से कहा कि यज़ीद की बैअत कर लें लेकिन अपनी यह दरख़्वास्त इमाम हुसैन (अ0) पर मुसल्लत नहीं की। (मनाक़िब इब्ने शहर आशोब जिल्द चार पेज–88) अपनी आख़री वसिय्यत में मुआविया

ने यज़ीद से कहा था कि अगर हुसैन (अ0) बैअत करने से इन्कार कर दें तो वह उस पर ख़ामोश रहे और मामले को नज़र अन्दाज़ कर दे क्योंकि वह उन नताएज से बाख़बर था जो बैअत के लिए दबाव डालने की सूरत में पेश आ सकते थे। लेकिन अपनी अनानियत और नाआक़िबत अन्देशी की वजह से यज़ीद ने अपने बाप की इस नसीहत को नज़र अन्दाज़ कर दिया और अपने बाप के इन्तेक़ाल के बाद हाकिमे मदीना के नाम यह फरमान भेजा कि वह हुसैन (अ0) से या तो उसकी बैअत ले या उनका सर दमिश्क़ भेज दे।(मनाक़िब इब्ने शहर आशोब जिल्द चार पेज–88)

मदीने के गवर्नर की तरफ से इमाम हुसैन (अ0) को इस मुतालबे से मुत्तला किये जाने के बाद आप ने इस पर ग़ौर करने के लिए मोहलत माँगी और शब के पर्दे में अपने अफ़रादे ख़ानदान के साथ मक्का की तरफ रवाना हो गये और खाना काबा में पनाह ली, जो इस्लाम में शरअी तौर से सलामती और पनाह का मरकज़ है। यह वाक़ेआ माहे रजब 60 हिजरी के अवाख़िर और शाबान की इब्तेदा में पेश आया। तक़रीबन चार माह तक इमाम हुसैन (अ0) मक्का मुकर्रमा में पनाहगुज़ीं रहे और यह ख़बर पूरी इस्लामी दुनिया में फैल गयी। एक तरफ तो जो लोग हुकूमते मुआविया की सख़्तियों से आजिज़ आ चुके थे और यज़ीद के मसनदे ख़िलाफत पर बैठने से मज़ीद ग़ैर मुतमइन थे, उन्होंने हज़रत इमाम हुसैन (अ0) को खुतूत लिखकर उनसे अपनी हमदर्दी का इज़्हार किया। दूसरी तरफ इराक़ और बिलखुसूस कूफा के मुसलमानों की तरफ से खुतूत का सिलसिला शुरु हो गया कि हज़रत इमाम हुसैन (अ0) इराक़ जाकर वहाँ के अवाम की क़यादत संभालें ताकि जुल्म व ज़ियादती पर क़ाबू पाने के लिए सफ आराई शुरु की जा सके। यह सूरते हाल फितरी तौर से यज़ीद के लिए ख़तरनाक थी। मक्का मुकर्रमा में हज़रत इमाम हुसैन (अ0) का क़याम उस वक़्त तक जारी रहा जब तक कि हज का वह ज़माना नहीं आ गया जिस मौक़े पर तमाम दुनिया के मुसलमान गिरोही शक्ल में एहकामे हज की अदायगी के लिये मक्का मुकर्रमा में उमण्ड आते हैं। इसी बीच इमाम हुसैन (अ0) को यह मालूम हुआ कि यज़ीद के कुछ पैरो हाजियों की शक्ल में एहराम के मख़्सूस लिबास में हथियार छुपाकर हज के दौरान इमाम हुसैन (अ0) को क़त्ल करने के लिए मक्का मुकर्रमा में दाखिल हो गये हैं।(इरशाद पेज–201)

हज़रत इमाम हुसैन (अ0) ने हज के अरकान को मुख़्तसर करके मक्का छोड़ देने का फैसला किया। इस दौरान मुसलमानों की बड़ी तादाद से ख़िताब करते हुए आपने कहा कि वह मक्का छोड़कर इराक़ के लिये रवाना हो रहे हैं। (मनाक़िब इब्ने शहर आशोब जिल्द चार पेज–89) इस मुख़्तसर तक़रीर में आपने इस बात का भी इज़हार किया कि उन्हें शहीद कर दिया जायेगा लिहाज़ा मुसलमानों को चाहिए कि वह उनके मक़सद के हुसूल में उनकी मदद करें और खुदा की राह में अपनी जाने क़ुर्बान करें। दूसरे दिन आप अपने अफ़रादे ख़ानदान और अपने साथियों के एक गिरोह के साथ इराक़ की तरफ कूच कर गये। इमाम हुसैन (अ0) ने यह इरादा कर लिया था कि वह यज़ीद के हाथ पर बैअत नहीं करेंगे। और इस बात से बख़ूबी वाक़िफ थे कि उन्हें क़त्ल कर दिया जायेगा। आप इस बात से बाख़बर थे कि बनी उमैय्या की फौजी ताक़त के मुक़ाबले में उनकी मौत नागुज़ीर है, जिसे बाज़ फिरक़ों की बदकिरदारी, उनमें रूहानी ताक़त की कमी और

खुद एतमादी के फुक़दान के बाअिस अवाम और ख़ास तौर से इराक़ के मुसलमानों की हिमायत हासिल थी। मक्के के बाज़ मुमताज़ अफ़राद इमाम हुसैन (अ0) के सद्दे राह हुए और उन्हें उनके इरादे के पेशे नज़र आने वाले ख़तरे से आगाह किया। लेकिन आप ने जवाब में कहा कि उन्होंने बेअत करने और एक ग़ैर मुन्सिफ और ज़ालिम व जाबिर हुकूमत की हिमायत करने से इन्कार कर दिया है। आपने मज़ीद फरमाया कि उन्हें इस बात का इल्म है कि अगर वह मुड़े या वापस हुए तो उन्हें क़त्ल कर दिया जायेगा। (इरशाद पेज–201) उन्हें ख़ाना–ए–खुदा के एहतेराम में मक्का छोड़ देना होगा। और अपनी खूँरेज़ी से ख़ाना–ए–काबा की हुरमत को पामाल नहीं होने दिया जायेगा। कूफे की राह में और शहर से चन्द दिनों की मसाफत के फासले पर आपको यह ख़बर मिली कि कूफे में यज़ीद के एजेण्ट ने आपके एलची हज़रत मुस्लिम बिन अक़ील और कूफे में आपके एक मुक़तदर हिमायती को क़त्क कर दिया है और उनके पैरों में रस्सी जकड़कर कूफे की गलियों में उनकी तशहीर की जा रही है। (इरशाद पेज–204) शहर और उसके अतराफ में सख़्त पहरा बिठा दिया गया है। और दुश्मन के अनगिनत फौजी इमाम हुसैन (अ0) का इन्तिज़ार कर रहे हैं। आपके सामने इसके सिवाय कोई और रास्ता न था कि आप आगे बढ़ें और अपनी मौत को गले लगा लें। चुनानचे इमाम ने आगे बढ़कर शहीद हो जाने के अपने इरादे का पुरज़ोर इज़हार किया और अपना सफर जारी रखा। (इरशाद पेज–205)

कूफा से तक़रीबन सत्तर किलोमीटर के फासले पर वाक़ेअ कर्बला के रेगिस्तान में हज़रत इमाम हुसैन (अ0) और उनके असहाब को यज़ीद की फौज़ों ने घेर लिया। यह लोग आठ दिनों तक इस मक़ाम पर ठहरे रहे जिसके दौरान घेरा तंग हो गया और दुश्मन की फौज़ों की तादाद बढ़ती रही। आख़िर में हज़रत इमाम हुसैन (अ0) उनके अहले हरम और उनके चन्द साथियों को तीस हज़ार सिपाहियों की फौज ने नरग़े में ले लिया। (मनाक़िब इब्ने शहर आशोब जिल्द चार पेज–98) इन दिनों में हज़रत इमाम हुसैन (अ0) ने अपनी पोज़ीशन मुस्तहकम की और अपने असहाब का आख़री इन्तेख़ाब किया। शब में आप ने अपने अस्हाब को जमा किया और एक मुख़्तसर तक़रीर के दौरान आपने कहा कि हमें मौत और सिर्फ मौत का समना है। आपने मज़ीद कहा कि जहाँ तक दुश्मन का ताल्लुक़ है उसे सिर्फ हम लोगों से मतलब है। हम तुम पर से अपनी बैअत उठाये लेते हैं लिहाज़ा तुम में से जो भी जाना चाहे रात के अन्धेरे में फरार होकर अपनी जान बचा सकता है। इसके बाद आपने हुक्म दिया कि चिराग़ गुल कर दिया जाये। इस मौक़े पर आपके वह बहुत से साथी जो सिर्फ अपने मफाद की ख़ातिर आपके साथ हो लिये थे, वहाँ से मुन्तशिर हो गये, सिवाय उन मुठ्ठीभर हक़ पसन्दों, इमाम के तक़रीबन चालिस क़रीबी साथियों और बनी हाशिम के कुछ अफ़राद के जो वहाँ मौजूद रह गये थे।

(मनाक़िब इब्ने शहर आशोब जिल्द चार पेज–98)

जो लोग रह गये थे उनका इम्तिहान लेने के लिए इमाम हुसैन (अ0) ने उन्हें भी एक बार फिर इकटठा किया। आपने अपने साथियों और हाशमी क़राबतदारों से ख़िताब करते हुए एक बार फिर कहा कि दुश्मन को सिर्फ हमसे ग़र्ज़ है। हर शख़्स रात की तारीकी का फायदा उठाकर ख़तरे से बच सकता है। लेकिन इस बार इमाम हुसैन (अ0) के वफादार असहाब में से हर एक ने अपने अपने तौर पर यह जवाब दिया कि वह इस राहे

हक़ से एक लमहे के लिए भी पीछे नहीं हटेंगे जिसके हज़रत इमाम हुसैन (अ0) क़ाएद हैं, नीज़ यह कि वह उन्हें कभी तन्हा नहीं छोड़ेंगे। उन्होंने कहा कि वह इमाम के अहले हरम की हिफाज़त उस वक़्त तक करेंगे जब तक उनके जिस्म में ख़ून का एक क़तरा भी बाक़ी है और जब तक उनके हाथ में तलवार उठाने की ताक़त मौजूद है। (मनाक़िब इब्ने शहर आशोब जिल्द चार पेज–99)

माहे मोहर्रम की 9 तारीख़ को दुश्मन की तरफ से हज़रत इमाम हुसैन (अ0) को चैलेन्ज किया गया कि वह ''बैअत या जंग'' में से किसी एक का इन्तेख़ाब कर लें। इमाम हुसैन (अ0) ने इबादत करने की ग़र्ज़ से दुश्मन से एक शब की मोहलत माँगी और दूसरे दिन जंग के मैदान में उतरने का फैसला कर लिया।

(मनाक़िब इब्ने शहर आशोब जिल्द चार पेज–98)

10 मोहर्रम 61 हिजरी (मुताबिक़ 680 ई0) को हज़रत इमाम हुसैन (अ0) ने 90 अफ़राद से भी कम पर मुश्तमिल अपनी मुख़्तसर सी फौज को दुश्मन के सामने सफ आरा किया जिसमें चालीस असहाबे हुसैनी, यज़ीदी फौज के तक़रीबन तीस वह सिपाही जो जंग की रात को और दिन में दुश्मन की फौज से निकल कर इमाम हुसैन (अ0) की तरफ आ गये थे, नीज़ ख़ानदाने बनी हाशिम के अफ़राद शामिल थे, जिनमें हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के भाई, भतीजे, भाँजे और भाँजियाँ शामिल थीं। यह हज़रात आशूरा के दिन सुब्ह से अपनी आख़री साँस तक लड़े और आख़िर में हज़रत इमाम हुसैन (अ0), जवानाने बनी हाशिम और तमाम असहाबे हुसैन शहीद कर दिये गये। इन शोहदा में हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के दो बच्चे, जिनकी उम्रें 13 और 11 साल की थीं, एक पाँच साला बच्चा, नीज़ हज़रत इमाम हुसैन का एक शीरख़्वार बच्चा भी शामिल था।

जंग ख़त्म करने के बाद दुश्मनों ने हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के हरम मोहतरम को ताख़्त व ताराज किया और ख़ियामे हुसैनी में आग लगा दी। शोहदा के सरों को काट कर उनकी लाशों को पामाल किया और उन्हें मैदान में बेगोरो कफन छोड़ दिया, नीज़ इमाम हुसैन (अ0) की बेयारो मददगार और मुअज़्ज़ तरीन बीबियों और बच्चियों को क़ैदी बना लिया और शोहदा के सरों के साथ उन्हें कूफ़ा की तरफ ले गये। (बहारुल अनवार जिल्द–10 पेज–200,202,203) इन क़ैदियों में तीन मर्द थे, इमाम हुसैन (अ0) के बाइस साला फ़रज़न्द और चौथे इमाम हज़रत अली इब्नुल हुसैन (अ0) जो बीमार और चलने फिरने से माज़ूर थे, नीज़ उनके चार साला साहबज़ादे मुहम्मद बिन अली जो बाद में पाँचवें इमाम मुक़र्रर हुए, आख़री हज़रत हसन मुसन्ना थे जो हज़रत इमाम हसन (अ0) के साहबज़ादे और हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के दामाद थे और जो जंग के दौरान जख़्मी हो जाने की वजह से लाशों के दरमियान पड़े हुए थे। दुश्मनों ने उन्हें क़रीबुल मर्ग पाया था और एक जनरल की मुदाख़लत पर उनका सर क़लम नहीं किया था। उन्हें क़ैदियों के हमराह कूफ़ा और फिर वहाँ से यज़ीद के सामने दमिश्क़ ले गये।

कर्बला के वाक़ेए के वजूद में आने, अहलेबैते नबवी (स0) की मुख़द्दरात इस्मत व तहारत नीज़ बच्चों को क़ैदी बनाकर उन्हें दयार ब दयार फिराने और क़ैदियों के दरमियान मौजूद अली (अ0) की बेटी ज़ैनब (स0) और चौथे इमाम की तरफ से जा बजा की गयी तक़रीरों ने बनी उमैय्या को बेनक़ाब कर दिया। रसूले इस्लाम (स0) के अहले बैत की इस तज़लील ने मुआविया

के इस प्रोपगण्डे की धज्जियाँ उड़ा दीं जो वह बरसों से करता चला आ रहा था। नौबत यहाँ तक पहुँच गयी कि यज़ीद अवाम के दरमियान इस मामले पर इज़्हारे अफसोस करता था और उसका ज़िम्मेदार अपने ऐजेन्टों को गरदान्ता था। अगरचे वाक़ेआ–ए–कर्बला का असर देर में हुआ लेकिन यह वाक़ेआ हुकूमते बनी उमैय्या के पूरे दौर का सबसे बड़ा वाक़ेआ था। इस वाक़ेए ने शीआीयत की जड़ें और मज़बूत कर दीं। इसके फौरी असरात में वह बग़ावत है जो बाग़ियों के दरमियान खून आशाम जंगों की सूरत में बारह बरस तक जारी रही, जिसमें हर वह फ़र्द जो इमाम हुसैन (अ0) की शहादत में शरीक था सज़ा और इन्तेक़ाम से नहीं बच सका।

जिन लोगों ने हज़रत इमाम हुसैन (अ0) और यज़ीद की ज़िन्दगी की तारीख़ और उनके वक़्त के हालात का मुतालाअ किया है नीज़ तारीखे़ इस्लाम के इस बाब का तजज़िया किया है, उन्हें इस में कोई ताज्जुब न होगा कि इन हालात के पेशे नज़र इमाम हुसैन के पास इसके अलावा और कोई चारा न था कि वह अपनी जान कुर्बान कर दें। अगर इमाम हुसैन यज़ीद की बैअत कर लेते तो इसका मतलब यह होता कि वह सरे आम इस्लाम की तौहीन करते जबकि यज़ीद ने अपने अमल से यह ज़ाहिर कर दिया था कि उसे इस्लाम और उसके क़वानीन का कोई पास नहीं है। बल्कि उसने बरसरे आम इस्लाम की असास और उसके क़वानीन को अपने पैरों तले रौंद डाला था। जो लोग यज़ीद के साथ थे अगर वह भी इस्लाम के अहकाम की मुख़ालफत करते तो इस्लाम के लिबास में करते और कम से कम रसमी तौर पर इस्लाम का एहतेराम ज़रूर करते नीज़ खुद के अस्हाबे रसूल (स0) होने पर फखर करते। इससे यह पता लगाया जा सकता है कि इन वाक़ेआत के मुफस्सिरीन का यह दावा बिलकुल ग़लत है कि हज़रत इमाम हसन (अ0) और हज़रत इमाम हुसैन (अ0) दो मुख़्तलिफ़ुल मिज़ाज भाई थे जिनमें से एक ने सुलह का रास्ता अपनाया दूसरे ने जंग को पसन्द किया। इसलिए कि एक भाई ने मुआविया के साथ सुलह की जबकि उनके पास चालीस हज़ार सिपाहियों का लश्कर था। और इसके बरख़िलाफ दूसरा भाई सिर्फ चालीस नुफ़ूस पर मुश्तमिल फौज के साथ यज़ीद से सफआरा हो गया। क्योंकि हम देखते हैं कि वही इमाम हुसैन (अ0) दस साल तक तो मुआविया की हुकूमत के तहत रहे मगर एक दिन के लिये यज़ीद की बैअत न की। इसी तरह उनके वह दूसरे भाई हैं जो मुआविया के मुख़ालिफत न करके दस साल तक उसकी हुकूमत के तहत रहे।

हक़ीकत में तो यह कहना चाहिए कि अगर हज़रत इमाम हसन (अ0) और हज़रत इमाम हुसैन (अ0) मुआविया से लड़ते तो वह यक़ीनन क़त्ल कर दिये जाते जिससे इस्लाम को कोई फायदा न पहुँचता और मुआविया जैसे चालाक सियासतदान की बज़ाहिर इस्लाम दोस्त पालीसी की वजह से उनकी मौत का कोई असर भी न होता जो अपने को सहाबी–ए–रसूल, कातिबे बारी और मोमिनीन का चचा समझता था। नीज़ अपनी हुकूमत को शरीअत के ढाँचे से ढके हुए था। इसके अलावा अपनी ख़्वाहिश की तकमील के लिये साज़िश रच कर उन हज़रात को उन्हीं के लोगों के हाथों क़त्ल करवा देता और सोगवारी का माहोल क़ायम करके उनके खून का इन्तेक़ाम लेने का उसी तरह से ढोंग रचता जिस तरह से उसने खुद को क़त्ले उसमान के इन्तेक़ाम का दावेदार ज़ाहिर किया था। □□□